भारतीय चित्रकला की कहानी

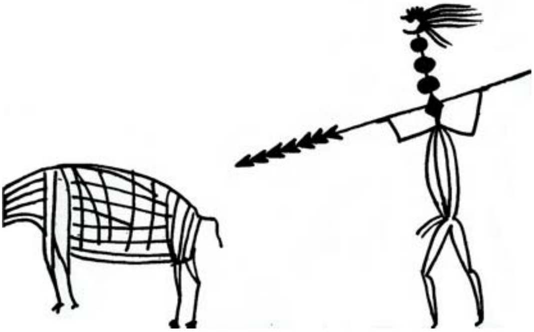

भारत ज्ञान विज्ञान समिति

नव जनवाचन आंदोलन

इस किताब का प्रकाशन भारत ज्ञान विज्ञान समिति ने 'सर दोराबजी टाटा ट्रस्ट' के सहयोग से किया है। इस आंदोलन का मकसद आम जनता में पठन-पाठन संस्कृति विकसित करना है।

भारतीय चित्रकला की कहानी माणिक वालावलकर	**Bharatiya Chitrakala Ki Kahani** **Manik Walawalkar**
पुस्तकमाला संपादक तापोश चक्रवर्ती	***Series Editor*** **Taposh Chakravorty**
कॉपी संपादक राधेश्याम मंगोलपुरी	***Copy Editor*** **Radheshyam Mangolpuri**
कवर एवं ग्राफिक्स जगमोहन	***Cover & Graphics*** **Jagmohan**
प्रथम संस्करण नवंबर, 2007	***First Edition*** **November, 2007**
सहयोग राशि 35 रुपये	***Contribuation*** **Rs. 35**
मुद्रण आकृष्ट ग्राफिक्स गुड़गांव, हरियाणा	***Printing*** **Aakrisht Graphics** **Gurgaon, Haryana**

Publication and Distribution

© Bharat Gyan Vigyan Samiti

Basement of Y.W.A. Hostel No. II, G-Block, Saket , New Delhi - 110 017
Phone : 011 - 26569943, Fax : 91 - 011 - 26569773
Email : bgvs_delhi@yahoo.co.in, bgvsdelhi@gmail.com
website: www. bgvs.org

BGVS NOVEMBER 2007 2K 0035 NJVA 0094/2007

भारतीय चित्रकला की कहानी

माणिक वालावलकर

भारतीय चित्रकला की कहानी

भारत के किसी भी गांव की सुबह देखें– प्रसन्न वातावरण में पुताई किया हुआ आंगन, उसमें बनाई हुई सफेद रंगोली और उसमें शुभसूचित करने वाला हल्दी–कुमकुम का तिलक··· लगभग हर दिन का स्वागत ऐसे ही रंगों और रेखाओं से होता है। रंगोली की इन रेखाओं से यह घर या आंगन किस प्रदेश का है, यह आप बता सकते हैं। कैसे? रेखाओं के लयदार बल से और उनसे बनते आकारों से। यह महाराष्ट्र की रंगोली है, बंगाल की अल्पना है, दक्षिण की कोलम या राजस्थान का मंडल है– यह आप बता सकते हैं। इस नजाकत भरी रंगोली का आस्वाद लेकर आगे बढ़ें तो छोटी–सी सीढ़ियों के पार घर का दरवाजा दिखता है। इस लकड़ी के दरवाजे की चौखट पर भी कुछ–न–कुछ नक्काशी देखने को मिलती है। इस नक्काशीदार दरवाजे को लांघकर घर में झांकें तो पता चलता है, घर कितना भी छोटा और सादा हो, उसमें जगह–जगह कला के नमूने दिखाई देते हैं। घर के पुराने बर्तन, दीए, लकड़ी की अलमारियां और ऐसी कई चीजों पर पारंपरिक कारीगरी के निशान बने होते हैं।

एक वक्त ऐसा था कि सर्वसामान्य मनुष्य का जीवनमान भी सौंदर्य से स्पर्शित था। हमारे त्यौहारों की विधि और उनसे संबंधित रंगसंगति इसकी साक्षी है। भारत के विभिन्न जातियों में 'जीवती' यानी मातृदेवता की पूजा होती है। अलग–अलग प्रदेशों में नाग, हाथी, शेर आदि प्राणियों की भी पूजा होती है। इस पूजा के बहाने घर की औरतें

दीवारों पर चित्र बनाती हैं। कई जगहों पर लोग शादी का घर ऐसे ही चित्रों से सजाते हैं। इतना ही नहीं, नवजात शिशु के जन्म और घर में किसी की मृत्यु जैसे प्रसंगों पर भी चित्र बनाने की प्रथा है। रंगोली हो या ऐसे चित्र, भारतवासियों के लिए ये केवल चित्र नहीं हैं। उनके लिए यह जन्म से मृत्यु तक जीवन की अनंत भावनाओं की अभिव्यक्ति है।

चित्रकला का उद्‍गम कैसे हुआ, इसकी एक कथा भारतीय पुराणों में लिखी हुई है। विष्णुधर्मोत्तर पुराण के 35 वें अध्याय के प्रारंभ में यह कथा है। एक बार नारायण ऋषि तप के लिए बैठे थे। इंद्रदेव ने अपनी सारी अप्सराओं को उनकी तपस्या भंग करने के लिए भेज दिया, किन्तु ऋषि ने उन अप्सराओं को देखकर, उन पर मोहित होने की बजाय अमृतरस से उर्वी पर, यानी जमीन पर, एक लावण्यवती का चित्र बनाया। यही लावण्यवती यानी उर्वशी थी। ऋषि ने इस चित्र में प्राणों की स्थापना की और वह चित्र जीवित हो गया। ऋषिवर द्वारा निर्मित इस सुंदर अप्सरा को देखकर इंद्र की सारी अप्सराएं शर्मिंदा होकर वहां से चली गईं। इसके पश्चात नारायण ऋषि ने चित्र का शास्त्र तैयार कर उसे विश्वकर्मा को सिखाया। और यहीं से चित्रकला का जन्म हुआ।

हम अपने आस-पास में अनेक चित्र देख देखते हैं– कभी घरों में, कभी मंदिरों में, कभी कार्यालयों में और कभी कला-दीर्घाओं में। "आपको कौन-सा चित्र पसंद आता है?" अगर हम यह सवाल पूछें तो आपमें से हर एक का जवाब अलग-अलग होगा। किसी को पशु-पंछियों के चित्र पसंद आएंगे, किसी को इंसानों के, किसी को सिर्फ पेड़-पौधों के चित्र अच्छे लगेंगे। कोई कहेगा, मुझे वस्तु-चित्र या संकल्प-चित्र पसंद हैं। चित्र अच्छा लगता है– इसका मतलब क्या होता है? चित्र का विषय, आकार, रंग, रेखाओं से परिपूर्ण बना हुआ चित्र अच्छा लगता है। फिर भी इस अच्छा लगने का मतलब क्या होता है? किसी चित्र का विषय बहुत अच्छा है; पर उसकी रेखाएं और आकार अच्छे न हों तो क्या होगा? विषय ठीक से समझ में आएगा

नहीं और फिर चित्र ज्यादा अच्छा नहीं लगेगा। और हम केवल 'चित्र ठीक है', ऐसी टिप्पणी कर छोड़ देंगे। इसका मतलब है कि चित्र में आवश्यक हर घटक ठीक से चित्रित किया गया हो तो ही चित्र अच्छा और सुंदर होता है। अब यह अच्छा चित्र बनाएं कैसे? आपका जवाब होगा– हाथ में पेन्सिल या चॉक लेकर। एक तरह से यह भी सही है। वैसे छोटे बच्चे के हाथ में भी पेन्सिल या चॉक थमा दो तो वह भी दीवारों पर कुछ-न-कुछ जरूर बना देता है। थोड़ी समझ आने पर उसे घर, आदमी, पर्वत, पंछी जैसे आकार बनाना आने लगता है। धीरे-धीरे वह इन्हीं आकारों को मिलाकर एक समूचा चित्र बनाने लगता है। इस चित्र की शुरुआत होती कहां से है? बिंदु से। अनेक बिंदु मिलाकर एक रेखा बनती है और रेखाओं को मोड़कर तैयार होते हैं आकार। इन्हीं आकारों में फिर रंग भरकर चित्र बनता है। कई चित्रों में रंग नहीं होते, केवल रेखाएं होती हैं। ऐसे चित्रों को रेखांकन कहते हैं अर्थात ऐसे चित्रों में भी विचार व भाव-भावनाएं होती हैं। किसी भी चित्र की रेखाओं में, आकारों में, रंगों में यदि विचार, भाव-भावनाओं को शामिल किया गया हो तो ही उससे अच्छी अभिव्यक्ति हो सकती है।

इस किताब में हम बहुत से चित्र देखेंगे भी और उनकी जानकारी भी लेंगे। लेकिन उससे पहले 'चित्र कैसे देखते हैं,' आइए इसके बारे में थोड़ी बात करते हैं। कई बार चित्र के साथ में उसकी जानकारी लिखी होती है- कलाकार का नाम, चित्र की कला-अवधि, आकारमान और चित्र का माध्यम। यह बात सच है कि सिर्फ जानकारी पढ़कर हम चित्र को समझ नहीं पाएंगे। लेकिन इस जानकारी से चित्रकार ने जिस परिस्थिति में चित्र का निर्माण किया है, उसका अनुमान लगा सकते हैं। चित्र के आकारमान से चित्र में बनाए गए आकार और प्रतिमाओं का अंदाजा होता है। कई बार ऐसा देखा गया है कि चित्र का माध्यम चित्रकार की पहचान बनता है। अपनी कला निर्मिति के लिए चित्रकार ने यही माध्यम क्यों अपनाया, यह हम सोचते हैं। चित्र के बारे में यह पढ़ना तो आवश्यक है, लेकिन उससे भी आवश्यक है चित्र को

बार-बार देखकर उसे अनुभव करना। चित्र समझने के लिए उससे घंटों तक बातें करनी पड़ेगी और अगर एक बार उससे आपकी दोस्ती हो गई तो चित्र खुद-ब-खुद अपनी कहानी बताने लगता है।

कोई चित्रकार अपनी कलाकृति में इंसान, पशु-पक्षी और वस्तु की प्रतिमाएं निकालता है तो कोई चित्रकार केवल रंग और रेखाओं के संयोग से चित्र बनाता है। जिनमें प्रतिमाएं होती हैं, उन्हें प्रतिरूप चित्र कहते हैं और जिनमें ऐसे विशिष्ट आकार, प्रतिमाएं नहीं होतीं, उन्हें अप्रतिरूप या अमूर्त चित्र कहते हैं। अमूर्त चित्र समझ में ही नहीं आता, ऐसा कहकर वे इसे मॉडर्न आर्ट कहते हैं। आपने कभी आंखें मूंदकर शांति का अनुभव किया है? ऐसी शांति को महसूस करते वक्त बंद आंखों के सामने कुछ रंग, आकार नजर आते हैं। उसमें कोई विशिष्ट कहानी या प्रसंग नहीं होता। वह तो केवल मन के विचारों का प्रतिबिंब होता है। होली खेलते वक्त हम यह नहीं सोचते कि अपने दोस्तों को हम किस आकार या रंग से रंगेंगे? हम तो बस रंगों की बौछार करते हैं। हम मन के उसी आनंद को पूरे माहौल में प्रतिबिंबित करते हैं। अमूर्त चित्र ऐसा ही होता है, निराकार आनंद जैसा।

चित्र बनाने के लिए आजकल कई अलग और नए माध्यम उपलब्ध हैं। इन माध्यमों की वजह से चित्र को एक निश्चित रूप प्राप्त होता है। (यह बताने का तात्पर्य इतना ही है कि हर चित्रकार का अपना एक माध्यम होता है।) उत्तम बनाने के लिए केवल चित्रकारी का ज्ञान उपयुक्त नहीं है। इसकी भी एक कथा विष्णुधर्मोत्तर पुराण में है। वज्र नाम का एक शिष्य मार्कण्डेय ऋषि के पास शिल्पकारी सीखने के लिए आता है। वह ऋषिवर से मूर्तिशास्त्र सिखाने की विनती करता है। मार्कण्डेय ऋषि उससे कहते हैं, "मूर्तिशास्त्र सीखने के लिए चित्रकारी आनी जरूरी है।"

"तो फिर मुझे चित्रकारी सिखाएं।" ऐसी विनती वज्र करता है।

"चित्रकला का ज्ञान पाने के लिए नृत्य सीखना जरूरी है।" ऋषि समझाते हैं। वज्र नृत्य सिखाने की विनती करता है।

ऋषि कहते हैं, “वाद्य के ज्ञान बिना नृत्य नहीं आ सकता।”

“तो वाद्य सिखाइए।”

वज्र की इस विनती पर मार्कण्डेय ऋषि कहते हैं, “वाद्य का ज्ञान प्राप्त करने के लिए साहित्य और गीत का ज्ञान भी आवश्यक है।”

आखिर गीतशास्त्र से वज्र की शिक्षा शुरू होती है। मतलब यह है कि सब कलाएं एक-दूसरे से जुड़ी हुई हैं। सबमें से थोड़ा-थोड़ा रस लेकर ही हमें उसे अनुभव करना चाहिए, सीखना चाहिए।

गुफाचित्र- भिमबेटका (म.प्र.)

यह चित्र मध्यप्रदेश के भिमबेटका गुफाओं में है- आदिमानव द्वारा चित्रित किया हुआ, लगभग दस हजार वर्ष पुराना चित्र। इन गुफाओं की खोज हाल ही में हुई है। महाराष्ट्र के पुरातत्व-विद्या के अभ्यासक एवं संशोधक श्री हरिभाऊ वाकणकर ने इन गुफाओं की खोज की। पुरातत्व-विद्या अर्थात पुरातन अवशेषों का अभ्यास। भिमबेटका जैसी गुफाएं पूरे भारत में कई जगहों पर पाई जाती हैं। लेकिन अभ्यासकों ने इन भिमबेटका गुफाओं को अति प्राचीन और अधिक महत्त्वपूर्ण माना है।

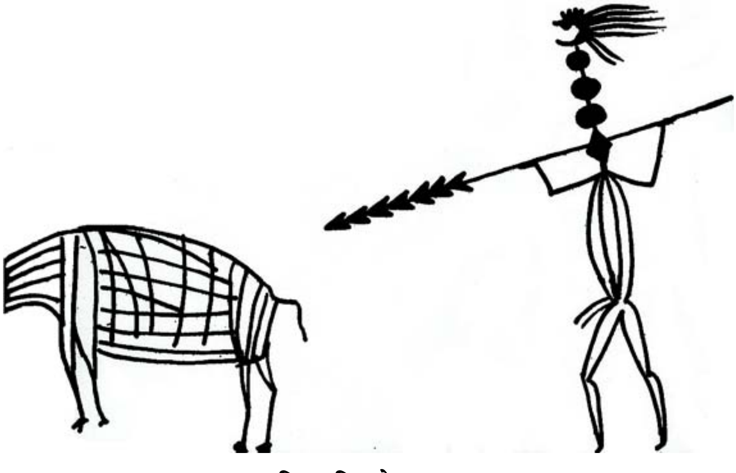

गुफाचित्र भिमबेटका, म.प्र.
(गुफाचित्र का बनाया हुआ अभ्यास आरेखन)

इन चित्रों को गौर से देखें तो समझ में आता है कि यह केवल दीवारों व छतों पर बनाए हुए चित्र ही नहीं हैं, बल्कि इन्हें पत्थरों में हल्का-सा तराशा गया है। आदिमानव का जीवन कैसा था, इसकी कल्पना आप कर सकते हैं। घने जंगलों में अपनी अन्न, वस्त्र और निवास की मूल जरूरतों को पूरा करते हुए वह शिकार करता था। उसका सारा जीवन इस शिकार से ही जुड़ा हुआ था। इसलिए उसके गुफाचित्र भी इसी विषय के हैं। गाय, बैल, सुअर, हिरण– ऐसे लगभग 452 प्राणी इन गुफाचित्रों में दिखाए गए हैं। कई प्राणियों के पेट में उसके बच्चे भी चित्रित किए गए हैं, मानो जैसे उसका 'एक्स-रे' निकाला हो।

शिकार और इन मूल जरूरतों का चित्र बनाने से क्या संबंध हो सकता है? आजकल हम किसी काम पर जाने से पहले भगवान की पूजा करते हैं। वैसे उस वक्त भी आदमी शिकार करने से पहले उस प्राणी के बारे में सोचकर भगवान की पूजा करके चित्र बनाता था। शिकार के लिए आवश्यक तकनीक और मानसिक शक्ति वह चित्र बनाकर प्राप्त कर लेता था। चित्र में प्राणी के शरीर में घुसे हुए बाण दिखाए गए हैं। प्राणी को कहां बाण मारने से उसकी तुरंत मृत्यु होगी, शायद इसका भी अभ्यास चित्र के माध्यम से किया गया होगा। जिस प्राणी का शिकार करना है, लोग उसका चित्र बनाकर उसकी पूजा करते होंगे- यह भी एक संभावना है। प्राणी प्रकृति का एक घटक है। उसका शिकार करने से प्राणी शाप देंगे, उससे बचने के लिए ऐसी पूजाएं होती होंगी– अभ्यासकों का यह मानना है। चित्र बनाने के लिए ऐसी कई प्रेरणाएं हैं। यह गुफाचित्र देखते हुए हम उस आदिम जमाने में खो जाते हैं। उस समय के जीवन का विचार करते हुए सोचने भी लगते हैं– कैसे जिए होंगे ये आदिम लोग?

अजंता गुफाचित्र

मध्यप्रदेश से अब हम चलते हैं महाराष्ट्र के औरंगाबाद जिले में। यहां का हरा-भरा खूबसूरत परिसर, पहाड़ों से बहते हुए पानी का संगीत,

पद्मपाणि बोधिसत्व, अजंता गुफाचित्र, गुफा क्रम-9

पंछियों का गुंजन, साथ में फैली हुई सुनहरी धूप। ये हैं अजंता की गुफाएं और यह ऊपर दिया हुआ चित्र इन्हीं गुफाओं का प्रसिद्ध चित्र 'पद्मपाणि बोधिसत्व' है। इस चित्र के बारे में थोड़ा और जान लें तो यह दोबारा या वहां जाकर प्रत्यक्ष रूप से देखते वक्त इसका आनन्द दुगुना हो जाएगा।

अजंता की गुफाओं के इन चित्रों का गुप्तकाल में निर्माण हुआ– पहली सदी से छठी सदी के काल में। भिमबेटका के गुफाचित्र और अजंता के गुफाचित्र के काल में काफी अन्तर है। कागज, कपड़ा, रंग वाले माध्यम शिल्पकारी के पत्थर या लकड़ी जैसे माध्यम से कम टिकाऊ हैं। समय की गोद में वे जल्दी ही नष्ट हो जाते हैं। ऐसे ही कुछ इस बीच की कालावधि में हुआ होगा। सिंधु संस्कृति से शुंगकाल तक की शिल्पकला और वास्तुकला के अवशेष मिले हैं। चित्रकारी के ऐसे महत्त्वपूर्ण अवशेष न मिलने के कारण हम सीधा गुप्तकाल में आते हैं। अजंता के ये गुफाचित्र भिमबेटका के गुफाचित्रों की तरह केवल दीवारों पर बनाए हुए नहीं हैं। इन गुफाओं की दीवारों की सतह विशिष्ट प्रकार के प्लास्टर से पोतकर बनाई गई है। इस पुताई की प्रक्रिया में 'फ्रेस्को तंत्र' और 'टेंपरा तंत्र' ऐसे दो प्रकार हैं। 'टेंपरा तंत्र' में सूखी सतह पर चित्र बनाते हैं और 'फ्रेस्को तंत्र' में सतह गीली होती है।

अजंता चित्र के विषय बौद्ध धर्म से संबंधित हैं। इनमें प्रमुख विषय है 'जातक कथा' अर्थात् भगवान बुद्ध के पुनर्जन्म की कथा।

इसके अलावा, उस वक्त की दैनंदिन जीवनचर्या, प्राणी, पंछी इत्यादि के कुछ चित्र देखने को मिलते हैं। ये चित्र बौद्ध धर्म से काफी जुड़े हुए हैं। इसी काल में बौद्ध धर्म का प्रचार एवं प्रसार पूरे भारत में बड़े पैमाने पर हुआ। यही उसका प्रमुख कारण है। ये निर्मित चित्र इस प्रचार का ही एक हिस्सा थे। इन चित्रों के लिए प्राकृतिक रंगों का इस्तेमाल किया गया था। हल्दी से बना पीला रंग, दीए की कालिख से बना काला रंग, पेड़ के पत्तों से बना हरा रंग, लेपिझ लाझुली के पत्थर से बना नीला रंग और मिट्टी के लाल रंग से विविध छटाएं बनाई जाती थीं।

प्रक्रिया जानने के बाद अब फिर से 'पद्मपाणि बोधिसत्व' देखते हैं। बोधिसत्व भगवान बुद्ध का ज्ञान प्राप्ति से पहले का राजस रूप है। पद्म अर्थात् कमल और पाणि यानी हाथ। हाथ में धारण किया हुआ नीलकमल इस चित्र का आकर्षण बिंदु है। हाथ की लयदार मुद्रा किसी कुशल नृत्यांगना जैसी दिखती है। भगवान बुद्ध राजा के रूप में दिखाए गए हैं। माथे पर मुकुट, गले में माला, कंधे पर जनेऊ, हाथ में कड़ा, कमर का वस्त्र, कमरपट्टे के मोतियों की पिरावट बड़ी सुंदरता से चित्रित की गई है। बुद्ध की पूरी प्रतिमा दाईं ओर झुकी हुई है, लेकिन उनका चेहरा हल्का-सा बाईं ओर झुका है। इस कारण चित्र में एक विशिष्ट लय का निर्माण होता है। चेहरे पर दिखाए गए शांत और संयमी भाव, कमल पंखुड़ियों जैसी अर्धोन्मीलित आंखें, सीधी नाक और माथे से हनुवटी तक फैला हुआ उजला चेहरे का स्मितहास्य बुद्ध के राजसी रूप को अधिक उठाव देता है। हर बार यह चित्र देखते हुए कुछ और नया पाने का आनन्द मिलता है। इस बोधिसत्व के पीछे राजमहल का कुछ हिस्सा, आदमी, पंछी जैसे आकार भी दिखते हैं। यहां अंकित ये चित्र आपको केवल उसकी भव्यता का अंदाजा दे सकते हैं। 'पद्मपाणि बोधिसत्व' हो या 'काली रानी', 'मां और बच्चा' हो या 'इंद्र और अप्सरा'– सभी चित्र सुंदर हैं। यह सब पढ़ने के बाद, अजंता जाकर ये चित्र प्रत्यक्ष रूप से देखने पर आपको अधिक आनन्द आएगा।

लघुचित्र शैली

चित्र की जानकारी में 'लघुचित्र शैली', यह ठीक पढ़ा आपने! जैसे भित्तिचित्र- दीवार आकार का, वैसे ही 'लघुचित्र', अर्थात् छोटे आकार का। सामान्य-तौर पर ऐसे चित्र कागजों पर बनाए जाते हैं। सामान्य चित्र की तरह यह तुरंत नहीं बनता। 'लघुचित्र' बनाने के लिए एक खास किस्म का कागज हाथ से बनाया जाता था। इस पर बारीक रेखाओं से बाहरी आकार बनाकर उसे प्राकृतिक रंगों से रंगा जाता था। उसपर फिर बारीकियां दिखाते थे और सबसे आखिर में सुनहरे रंग का लेपन होता था। इसके लिए खरा सोना इस्तेमाल करते थे। चित्र के सभी रंग एक-दूसरे में घुलमिलकर थोडा़ सौम्य हो आएं और चित्र थोड़ा चमकीला लगे, इसके लिए चिकने पत्थर से चित्र पर घिसाई होती थी। लघुचित्र का आकार कम-से-कम 8x10 सेंटीमीटर और अधिक से अधिक 70x50 सेंटीमीटर होता था। आकारों की लयदार बाहरी रेखाएं और सपाट रंग-लेपन, लघुचित्र शैली की विशिष्टता मानी जाती है। भारतीय चित्रकारों को यह चित्रशैली मुगल चित्रकारों ने सिखाई और मुगलों को पारसी चित्रकारों ने। इससे आप इसका अंदाजा लगा सकते हैं कि यह परम्परा कितनी पुरानी है और कितनी दूरी तय करके आई है।

जंगली हाथी पर अंकुश की कोशिश में अकबर, माध्यम- कागज पर नैसर्गिक रंग, चित्रकार-मिसकीन

मुगल लघुचित्र शैली

बाबर, हुमायूं, अकबर, जहांगीर, शाहजहां, औरंगजेब– ये नाम आपने इतिहास में पढ़े होंगे। अकबर की कथाएं, शाहजहां का ताजमहल, शिवाजी महाराज और औरंगजेब की

कथाएं प्रसिद्ध हैं। इन्हीं बादशाहों के जमाने में मुगल लघुचित्र शैली का निर्माण हुआ। यह समय था 15 वीं से 17 वीं सदी का। उस वक्त भारत मुगलों के अधीन था। इन सभी रईस बादशाहों ने कई चित्रकार अपने दरबार में रखे थे। मीर सय्यद अली, अद्व-अल-साजैद ऐसे मुगल लघुचित्रकारों ने बासवान, मिसकीन, दासवथ जैसे भारतीय चित्रकारों को तैयार किया। आगे चलकर इन्हीं चित्रकारों ने 'दरबारी चित्रकार' के रूप में बहुत ऊंचा स्थान प्राप्त किया। मुगल लघुचित्र के विषय थे राजा का शौर्य और पराक्रम। हमझनामा, अकबरनामा (अकबर चरित्र), तुतीनामा (तोते की कथाएं), रमझनामा (महाभारत) जैसे उस जमाने के ग्रंथों की विषय-वस्तु पर भी काफी चित्र बनाए गए। साहित्य और चित्रकारी का घना संबंध यहां देखने को मिलता है।

ऊपर का यह चित्र अकबरनामा से है। इसमें तिरछी चित्रकारी की गई है। चित्र के एक सिरे से दूसरे सिरे तक झेलम नदी का पुल बनाया गया है। तिरछी रेखाओं के कारण चित्र दो हिस्सों में बंट सकता है। चित्र दो हिस्सों में न बंटे चित्रकार 'मिसकीन' ने चित्र के ऊपरी हिस्से में राजमहल दिखाकर इसकी सावधानी बरती है। झेलम नदी के पुल से गुजरने वाले दो मदोन्मत्त हाथी और उन पर अंकुश रखने वाले बादशाह अकबर इस चित्र में दिखाए गए हैं। भागते हुए हाथी, नदी का खौलता हुआ पानी, पानी में अस्तव्यस्त नाव और सेवक- इनके हावभाव से चित्र में एक गति का निर्माण होता है। चित्र की गर्म और ठंडी रंगसंगति चित्र-विषय की गति का पूरक है। चित्र देखते हुए हमारी नजर भी चित्र के आकारों की तरह भागने लगती है। अकबर बादशाह के शौर्य और ताकत, उसके रहन-सहन का हमें एहसास होता है। अकबर बादशाह के उसी ठाट से हम भी अपने-आप चित्र में शामिल हो जाते हैं।

अकबर के बाद बादशाह जहांगीर को प्रकृति से लगाव था। उसने अपने 'मन्सूर' जैसे चित्रकारों से पशु, पंछी, फूल, पेड़-पौधे आदि विषय पर चित्र बनवाए। 'जेब्रा', 'तुर्की मुर्गा' उन्हीं में से कुछ प्रसिद्ध चित्र हैं। शाहजहां को चित्रकला से अधिक वास्तुकला में रुचि थी।

आगरे का ताजमहल उसके वास्तु-प्रेम का सबसे बड़ा साक्षी है। उसने अपने दरबारी चित्रकारों से वास्तुकला के नमूने चित्रों में बनवाए। उसके बाद बादशाह औरंगजेब गद्दी पर बैठा। इसे चित्रकला में कोई विशेष रुचि नहीं थी। इस दौरान उसके और उसके अधीन राजाओं के दरबारी चित्रकारों को काम मिलना मुश्किल हुआ। फिर धीरे-धीरे ये चित्रकार हिन्दू राजपूत राजाओं के आश्रय में चले गए। यह पढ़ते हुए समझ में आता है कि राजा-महाराजाओं ने अपनी-अपनी पसंद के अनुसार चित्रकारों से चित्र बनवाए। इसलिए यह चित्रकारी दरबारी कला कहलाती है।

राजपूत लघुचित्र शैली

राधा-कृष्ण वाला चित्र काफी सुंदर है न? यह चित्र राजपूत लघुशैली के किशनगढ़ नामक उप-शैली का है। राजपूत शैली मुख्य रूप से दो हिस्सों में बंटी हुई है। पहला प्रकार है राजस्थानी लघुशैली। इसमें भी और उप-प्रकार हैं। इन उप-प्रकारों के नाम उनके प्रदेशों के नाम के अनुसार रखे गए हैं- जैसे मेवाड़, बूंदी, जयपुर, जोधपुर, किशनगढ़, कोटा इत्यादि। दूसरा प्रमुख प्रकार है पहाड़ी लघुचित्र शैली। इसके उप-प्रकार हैं बशोली, कुलु, गुलेर, जम्मू, कांगड़ा, गढ़वाल आदि। इनमें से कुछ नाम जाने-पहचाने लगते हैं न? हो सकता है। आखिर ये भी तो भू-प्रदेशों के ही नाम हैं।

इन सभी शैलियों में थोड़ा-बहुत फर्क है, जिसके कारण हम उसको अलग से पहचान सकते हैं। इसके बारे में हम अधिक विस्तार से नहीं सोचेंगे। लेकिन थोड़ी जानकारी लेना आवश्यक है। राजस्थानी शैली में बाहरी रेखाएं गहरी होती हैं। चित्र की रंगसंगति तेजस्वी है- बिल्कुल राजस्थानी लोगों की पगड़ी की तरह, उनके घाघरे और चोली के रंगों की तरह। पहाड़ी चित्रशैली में नाजुक रेखाएं, सौम्य रंगसंगति दिखाई देती है- कुल्लू, जम्मू या हिमाचल के शांत ठंडे मौसम के जैसी। मजे की बात यह है कि राजपूत लघुचित्र शैली के विषय मुगल

राधा और कृष्ण, माध्यम- कागज पर नैसर्गिक रंग, चित्रकार-निहालचंद

लघुचित्र शैली से बिल्कुल ही भिन्न हैं। इस लघुचित्र शैली में गीत-गोविन्द, भागवत पुराण जैसे राधाकृष्ण के प्रेमकाव्य पर आधारित चित्र दिखते हैं। इतना ही नहीं, इनमें रागमाला (भारतीय संगीत के रागों के भाव), बारहमासा, नायक-नायिका भेद पर आधारित चित्र हैं। राजपूत लघुचित्र शैली प्रकृति, स्त्री-पुरुष की प्रेम भावनाओं, भक्ति-रस को महत्त्वपूर्ण मानती है।

यहां दिया गया यह चित्र किशनगढ़ शैली का है। राधा और कृष्ण का यह चित्र भक्ति-रस का आविष्कार कह सकते हैं। इसमें दिखाई गई राधा को 'बनीठनी' भी कहते हैं। 'बनीठनी' अर्थात् सजधज कर तैयार हुई चतुर स्त्री। किशनगढ़ के राजा सावंत सिंह खुद कृष्णभक्त थे। वह खुद एक उत्कृष्ट कवि भी थे। उन्होंने 'नागरीदास' उपनाम से प्रेम-काव्य लिखे। उनकी प्रेयसी उनकी सौतेली मां की दासी थी, जिसे वे प्यार से 'बनीठनी' कहते थे। सावंत सिंह के दरबारी चित्रकारों ने राजा के काव्य पर आधारित चित्र बनाए। उसमें काव्यानुरूप अपने राजा को कृष्ण रूप में और उनकी प्रेयसी को राधा रूप में चित्रित करके, उनके भक्ति-प्रेम को अजर-अमर कर दिया। बनीठनी राधा का चेहरा देखें तो चौड़ा मस्तक, लम्बी झुकी हुई आंखें, उनके किनारे की कमल जैसी गुलाबी छटा, धनुष की आकृति वाली भौंहें, गालों पर लहराती

बालों की लटें, सीधी लंबी नाक, पतले होठों पर मुस्कुराता कोमल चेहरा। राधा का यह चेहरा बहुत ही मोहक दिखता है। उसके परिधान, मोतियों के गहने, उसकी बारीकियां, सुनहरी नक्काशी वाली पारदर्शक चुनरी– उसकी मोहकता को और बढ़ाते हैं। कृष्ण तो मूलतः देवता स्वरूप हैं। उनका भी चौड़ा माथा, कमल की आकृति वाली भौंहें, कमल जैसी आंखें, सीधी नाक, नाजुक हनुवटी, संवेदनशील होठों पर दिखाया गया कृष्ण हास्य, केसरिया रंग की खूबसूरत पगड़ी– कृष्ण का यह राजस रूप, राधाकृष्ण का एक–दूसरे की ओर देखना, यह सब उचित प्रेम–भावना व्यक्त करता है। बनीठनी के बारे में एक और बात है। इसके हास्य की तुलना लिओनार्दो–दा–विंची के 'मोनालिसा' से की जाती है। इसे 'भारतीय मोनालिसा' भी कहा गया है। आपने 'मोनालिसा' का चित्र देखा है? नहीं? तो जरूर देखिए और बताइए आपको क्या लगता है?

वारली चित्रकला

क्या आपको ऐसा लगता है कि यह गोल और त्रिकोणी इंसान आपने कहीं देखे हैं? शायद हो सकता है। आजकल ये चित्र बड़े–बड़े सरकारी कार्यालयों में, उपहार–गृहों में और बड़े–बड़े घरों में भी दिखने लगे हैं। यह 'वारली चित्रकला' है। असल में भिमबेटका की आदिम चित्रकारी से जुड़ी हुई, आदिम चित्रकला परम्परा, भारत के अलग–अलग प्रदेशों में आज भी मौजूद है। संथाल, गोंड़, वारली– इन्हीं में से कुछ हैं। महाराष्ट्र के थाने जिले में यह वारली चित्रकारी कई वर्षों से शुरू है। लेकिन इसकी खोज हाल ही के कुछ सालों में हुई। श्री भास्कर कुलकर्णी नामक चित्रकार ने यह चित्रकारी पूरी दुनिया के सामने लाई थी। वारली समाज आज भी आदिमानव का जीवन ही व्यतीत कर रहा है। वारली घरों में आज भी त्यौहारों के बहाने औरतों द्वारा दीवारों पर चित्र बनाने की प्रथा है। यहां पारम्परिक प्रथा से तो स्त्रियां चित्र बनाती हैं, पर यह सुनकर ताज्जुब होगा कि उनके अच्छे चित्रकार के तौर पर, जिसे राष्ट्रपति पुरस्कार से सम्मानित किया गया है, 'जीव्या सोम्या म्हशा' नामक पुरुष चित्रकार है।

वारली लोग गोबर या गेरु से दीवारों की पुताई करते हैं। फिर उसपर चावल के गीले आटे से चित्र बनाते हैं। इनके घरों के सामने खजूर के पेड़ होते हैं। इसी पेड़ का कांटा वे चित्र बनाने के लिए इस्तेमाल करते हैं। पहले इनका सारा जीवन जंगल में खाना जमा करते हुए बीतता था। आजकल ये लोग थोड़ी-बहुत खेती करने लगे हैं। यही कारण है कि इनके चित्रों में पेड़, पंछी, बादल, खेत, बिच्छू, सांप, कीट, पहाड़, पहाड़ों पर बना मंदिर और भगवान भी होते हैं। गोलाकार खड़े हुए लोग और बीचों-बीच तारपा वाद्य बजाने वाला पुरुष- यह वारली चित्र का सबसे प्रसिद्ध आकार है। यह वारली नृत्य का चित्र है। पूनम की रात में ये लोग 'तारपा' नामक सामूहिक नृत्य करते हैं। वारली आदिम लोग प्रकृति में रहकर प्रकृति के ही चित्र बनाते हैं। आप इनके बनाए चित्र देखें। चित्र में दिखाई गई प्रकृति की बारीकियों का आनन्द जरूर लीजिए। कीड़े, मोर के सुन्दर आकार, घरों के अनाज में लगे चूहे, बीच में ही भागने वाला हिरण, पेड़ पर बैठे मोर का शिकार- ऐसी कई छोटी-छोटी बारीकियां आपको दिखेंगी। आजकल इनके गांव में रेलगाड़ी, ट्रक, वगैरा आने-जाने लगे हैं। इसीलिए ये आकृतियां भी इनके चित्रों में दिखने लगी हैं। यह सब चित्र में ढूंढ़ना वाकई मजेदार अनुभव होता है। ऐसा ही अनुभव गोंड़, संथाल चित्र ढूंढ़ने में होता है।

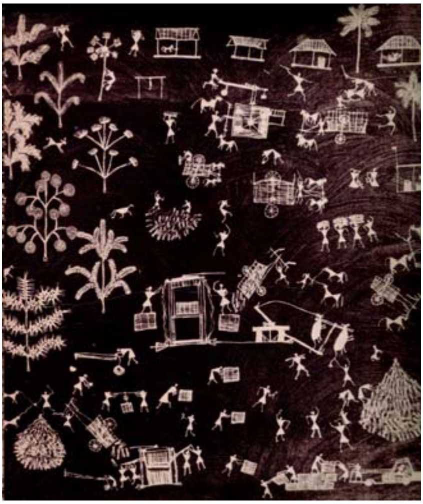

वारली चित्र (महाराष्ट्र)
माध्यम-गेरु पर चावल का आटा

पट्टचित्र देखाबा

भारत जैसे बहुरंगी, बहुढंगी और बहुभाषिक देश में सदियों से अनेक

माध्यम-कपड़ा, कागज पर नैसर्गिक रंग (पटचित्र-ओड़िया)

परंपराएं रही हैं। आदिम कला परंपराओं के साथ यहां लोक परंपराएं भी हैं। पट्टचित्र, कलमकारी, मधुबनी– ये ऐसी ही कुछ लोक परंपराएं हैं। गांव में रहने वाले लोगों को शायद पट्टचित्र मालूम होगा। पट्टचित्र किसी कथा पर आधाारित चित्र-शृंखला होती है। आमतौर पर रामायण, महाभारत, कृष्ण गाथा इसके विषय होते हैं। पट्टचित्र निर्मिति आजकल बहुत ही कम हो गई है। लेकिन इसकी प्रस्तुति आज भी अनेक गांवों में होती है। किसी एक रात में गांव की स्त्रियां, बच्चे, पुरुष इकट्ठा होते हैं। किसी घर या मंदिर का बड़ा-सा आंगन लोगों से भर जाता है। कलाकार पट्टचित्र लेकर आता है। दीए के उजाले में कलाकार एक-एक चित्र प्रस्तुत कर गाने लगता है। गाना रुकते ही कथा शुरू हो जाती है। गाना, फिर कथा– ऐसे कथा आगे बढ़ती है। आज का सिनेमा या ऐनिमेशन फिल्म का यह शुरुआती रूप है।

संथाल परगना में इसको 'जादूपटुआ' कहते हैं। बंगाल में 'पट्टदेखाबा', राजस्थान में 'पट' तो महाराष्ट्र में यह 'चित्रकथी' के नाम से जाना जाता है। उड़ीसा, गुजरात, आंध्रप्रदेश में भी यह पट्टचित्र परंपरा है। इन सभी शैलियों में थोड़ा बहुत फर्क है। महाराष्ट्र की चित्रकथा कागज पर बनाई जाती है।

भारत के बाकी जगह पर पट्टचित्र कपड़े पर बनाए जाते हैं। कपड़े पर बनाए इस चित्र को गोलाकार लपेटकर रखते हैं। कागज पर बने चित्र को एक के ऊपर एक रखते हैं। पट्टचित्र के लिए पूरे भारत में प्राकृतिक रंगों का इस्तेमाल होता है। भारतीय चित्रकला की यह दृश्य-श्रव्य कला-परंपरा बड़ी ही आकर्षक है। यह सब पढ़कर क्या आपको नहीं लगता कि आप भी अपने आस-पास के पट्टचित्र ढूंढ़कर उनके कलाकारों के साथ उनकी प्रस्तुति देखते हुए कोई रात गुजारें?

कलमकारी चित्र

पट्टचित्र की तरह 'कलमकारी' भी कपड़े पर बनाई जानेवाली चित्र-परंपरा है। यह मुख्यत: आंध्र की चित्र-परंपरा के चित्र हैं, जो वहां के मंदिरों में लगाए जाते हैं। कलमकारी शब्द 'कलम' (फारसी) शब्द से आया है। कलम अर्थात् लेखनी। सूती कपड़े पर कलम से चित्र बनाए जाते हैं। चित्र में लेखनी का इस्तेमाल होने से यहां रेखाओं का महत्त्व अधिक है। यह लेखनी खजूर या बांस की लकड़ी से बनती है। रेखांकन के लिए नुकीली, तो रंग-कार्य के लिए गोलाकार लेखनी बनाई जाती है। इन चित्रों के परंपरागत विषय सहज रूप से पुराण-कथाओं पर आधारित हैं। ऊपर के चित्र में कृष्ण-अर्जुन का संवाद है। इन चित्रों में मर्यादित रंगसंगति का इस्तेमाल होता है। देवताओं के चित्र नीले, मानवाकृति पीले और राक्षस लाल रंग से दिखाए जाते हैं। आजकल पारंपरिक कलमकारी से बड़ी चित्र रचनाएं बनाने वाले कारीगर कम हो गए हैं। लेकिन आज भी बड़ी दुकानों में फूलपत्तों की कलमकारी वाले बेडशीट, कुर्ते-पैजामे, परदे आदि कपड़े देखने को मिलते हैं।

कलमकारी चित्र (आंध्रप्रदेश)
माध्यम-कपड़े पर रंग

मधुबनी चित्र शैली

'मिथिला' का नाम आपने रामायण में पढ़ा होगा। मिथिला प्रदेश बिहार में है। इसी मिथिला की कला को मधुबनी कहते हैं। इसके मुख्य विषय रामायण पर आधरित होते हैं। मूलतः मधुबनी चित्र घरों पर बनते हैं। पूजाघर, बैठकखाना (मेहमान जहां बैठते हैं) और शादी का कमरा ऐसी तीन जगहों पर चित्र बनाने की परंपरा है। आजकल कागज पर भी चित्र बनाए जाते हैं। इन चित्रों में भी लोक चित्र-परंपरा जैसे प्राकृतिक रंगों का इस्तेमाल होता है। एक और मजे की बात यह है कि रंग सतह पर ठीक से चिपके, इसके लिए इसमें बकरी के दूध और बबूल के पेड़ के चिक का मिश्रण किया जाता है। मिथिला की चित्रकृति में आज भी घरों में बनाई गई कूचियों का ही इस्तेमाल करते हैं। रंग-लेपन और बारीकियां दिखाने का साहित्य उतना विकसित नहीं है। शायद इसीलिए इन चित्रों का ग्रामीण लहजा आज भी कायम है। आजकल इन चित्रों की विदेशों में बड़ी मांग है। इसलिए भारतीय कारीगरों के मेलों और बाजारों में ऐसे चित्र देखने को मिलते हैं।

मधुबनी चित्र (बिहार)

भारतीय समकालीन चित्रकला

(आजादी के पहले और बाद की भारतीय चित्रकला)

समकालीन अर्थात् आज का। हमने आदिम और लोकचित्रकला भी देखी। सालों-साल अपनी विशिष्टताओं के साथ इनका निर्माण होता रहा है। पर कला प्रवाह अपना मूलस्वरूप कायम रखकर दृश्य प्रवाह बदलता रहा है– जैसे अजंता के बुद्धचित्र, मुगल लघुचित्र और राजपूत चित्र शैली।

17 वीं शती में भारत में ईस्ट इंडिया कंपनी का आगमन हुआ। व्यापार उद्योग के लिए आयी हुई इस कंपनी ने धीरे-धीरे यहां के राजकाज और समाजकाज में भी अपना पैर पसारना शुरू किया। बाद में पूरे भारत पर ही कब्जा किया। भारत को अपनी स्वतंत्रता के लिए बड़ा संघर्ष करना पड़ा। 1947 में भारत फिर से आजाद हुआ। इस दौरान का इतिहास सभी को ज्ञात है। भारत की स्वतंत्रता के पूर्व और पश्चात की चित्रकला इसी इतिहास से संबंधित है। इतिहास का नाम सुनकर घबराइए मत। यह पूरा इतिहास चित्रमय है। पर इसे देखते वक्त संयम से रुककर विचार जरूर करना पड़ेगा।

हमने 17 वीं शती तक की लघुचित्र शैली देखी। इस शती तक ईस्ट इंडिया कंपनी ने अपनी जड़ें पूरे भारत में फैला ली थीं। इस कंपनी के अधिकारियों के साथ आए हुए चित्रकारों ने यहां के प्राकृतिक दृश्य, यहां की जातियों के उद्योग और व्यवसाय, उनके चित्र, और रहन-सहन तथा राजा-महाराजाओं का व्यक्ति चित्र बनाना शुरू किया था। भारतीय चित्रकारों ने इससे पहले फोटो जैसे दिखने वाले, छायाप्रकाश दिखाने वाले चित्र देखे ही नहीं थे। लघुचित्र शैली सुंदर थी, पर उसमें लयदार रेखाएं, सपाट रंग-लेपन था और विषय भी राधाकृष्ण के थे। खुद का भी चित्र बना सकते हैं– भारतीय चित्रकारों को इसका पहली बार एहसास हुआ। यहां से भारतीयों को यथार्थवादी चित्र-शैली की आस लगी। आज भी अगर कोई आपका चित्र बनाए तो आपको अच्छा ही लगता है। है न?

17 वीं शती के मध्य में चित्रकला से संबंधित और एक घटना घटी। मद्रास, कलकत्ता, मुंबई और लाहौर में कला-शिक्षा देने वाली संस्थाएं ब्रिटिश मार्गदर्शन में शुरू हुईं। उसका परिणाम आपके सम्मुख है। भारत की पारंपरिक चित्रकला निर्मिति ठंडी हो गई। भारतीय चित्रकला ब्रिटिश पद्धति से दी जाने वाली शिक्षा लेने लगे। इसमें यथार्थवादी चित्रण कैसे करें, यथार्थ दृश्य में पास और दूर की चीजें कैसे दिखाएं, वस्तु पर दिखने वाले छाया-प्रकाश और मौसम का परिणाम कैसे दिखाएं, यह सब सिखाया जाता था। भारतीय चित्रकारों ने पहले कभी इसके बारे में सोचा नहीं था। भारतीय चित्रकार इन बाहरी चीजों की बजाय आत्मा, मन, जैसे विषय पर चित्रनिर्मिति करते थे। यहां से हमारी चित्रनिर्मिति में पूरा बदलाव आया।

राजा रवि वर्मा

राजा रवि वर्मा भारत के प्रसिद्ध चित्रकारों में सबसे प्रमुख नाम है। इनका जन्म 1847 में केरल के किल्लीमन्नुर गांव में हुआ। भारत में कला शिक्षण शुरू होने का यह समय था। रवि वर्मा के मामा चित्रकार थे। राजा रवि वर्मा का प्राथमिक शिक्षण उनके इसी मामा के पास हुआ। आगे भी इनका कला शिक्षण किसी भी कला संस्थान में नहीं हुआ। वे खुद अपने-आप ही चित्रकला सीखते गए। त्रावणकोर संस्थान में आने वाले ब्रिटिश चित्रकारों के चित्रण का वे बारीकी से निरीक्षण करते थे। त्रावणकोर के दीवान माधवराव ने राजा रवि वर्मा को चित्रकारी के लिए प्रोत्साहित किया।

राजा रवि वर्मा ने रावण-जटायु युद्ध, कृष्ण-शिष्टाई, कृष्ण-बलराम, नल-दमयंती, शकुंतला, मत्स्यगंधा जैसे पौराणिक विषय पर चित्र बनाए। इसके लिए इस्तेमाल किया हुआ कैनवास और तैलरंग माध्यम पाश्चात्य थे। उनके द्वारा बनाया हुआ केरल स्त्री का चित्र 'नायर सुंदरी' के नाम से बड़ा ही मशहूर है। 1873 में 'शिकागो' की प्रदर्शनी में उनके 10 चित्र चुने गए थे। उस समय विदेश जाना और अपने चित्र प्रदर्शित करना उतना आसान नहीं था। बहुत ही लंबा और महंगा सफर था और

कई सारी कठिनाइयां होती थीं। पर राजा रवि वर्मा ने यह कर दिखाया था। पाश्चात्य देशों में अपने चित्र प्रदर्शित करने वाले ये पहले भारतीय चित्रकार थे।

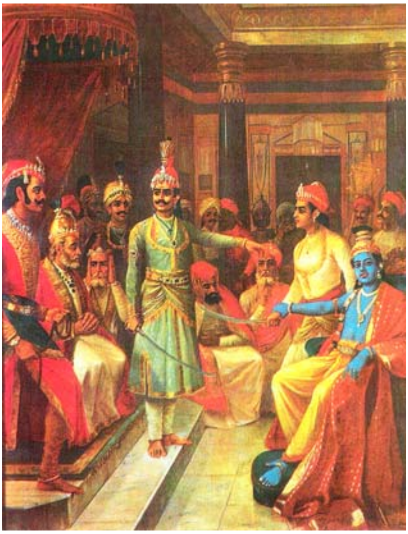

कृष्ण शिष्टाई, माध्यम- कैनवास पर तैल रंग, चित्रकार- राजा रवि वर्मा

राजा रवि वर्मा का इस क्षेत्र में एक और महत्त्वपूर्ण योगदान है। वह है 'ओलियोग्राफ' की निर्मिति। ओलियोग्राफ मुद्रा-चित्रण का प्रकार है। आज कैलेंडर या चित्र का मुद्रण जितना आसान है, उतना विकसित तंत्रज्ञान उस वक्त नहीं था। उन्होंने जर्मनी से उस वक्त का विकसित तंत्र ज्ञान भारत में लाया और मुंबई में एक छपाई प्रेस शुरू किया। वहां उन्होंने अपने चित्रों का मुद्रण करके उसकी प्रतियां निकालीं। ये कॉपियां आम लोग भी आसानी से खरीद सकें, ऐसी कीमतों में बेचीं। कैनवास पर बना मूल चित्र खरीदना सामान्य लोगों के बस में नहीं था। पर उनका पसंदीदा चित्र उनके पास हो, इसलिए यह अच्छा उपाय था। भारत के आम लोगों के घरों में राजा रवि वर्मा के चित्र पहुंचने का यही कारण था।

यहां दिया गया रवि वर्मा का चित्र लघुचित्र शैली के कृष्ण और अजंता के बुद्ध से बिल्कुल ही अलग है। इसका कारण यथार्थवाद है। यह पहले के चित्रों में नहीं था। यथार्थवाद अर्थात वास्तव में जैसा दिखेगा वैसा ही, हुबहू! इस चित्र में पांडवों का दूत बनकर कौरवों के दरबार में गए हुए श्रीकृष्ण का चित्रण है। कृष्ण का जोश और कौरवों का अहंकार दोनों भावनाओं का मिलाप इस चित्र में दिखाया गया है। चित्र की रचना ऐसे की गई है, मानो असल में दरबार भरा हो। राजदरबार का चित्र होने के कारण, दरबारी लोगों के अधोवस्त्र, मुकुट

और दूसरे गहने, दरबार की वास्तु, श्याम वर्ण कृष्ण पर विशिष्ट दिशा में दिखाए गए प्रकाश की वजह से छाया-प्रकाश का एक अनूठा खेल दिखता है। यूरोपियन शैली का यथार्थवादी चित्रण करने का यही कला-तंत्र राजा रवि वर्मा ने आत्मसात कर लिया था। आज आप उनके बनाए मूल चित्र केरल के राष्ट्रीय कला संग्रहालय में और बड़ौदा के सयाजीराव गायकवाड़ के राजमहल में देख सकते हैं। रवि वर्मा के चित्रों को मिली प्रसिद्धि के कारण ही उन्हें 'चित्रकारों का राजा' और 'राजाओं का चित्रकार राजा रवि वर्मा' कहा जाता है।

त्रिंदाद

यह चित्र चित्रकार त्रिंदाद का है। 19 वीं शती के आखिर में और 20 वीं शती के शुरू में मुंबई कलाकारों का प्रमुख केन्द्र था। सर जे.जे. स्कूल ऑफ आर्ट में उस वक्त भारत भर से अनेक कलाकार आकर कला सीख रहे थे। त्रिंदाद ऐसे ही एक गांव से आए हुए चित्रकार थे। इनके चित्रों में उनके गोवा की पार्श्वभूमि की झलक दिखती है। ईसाई, पुर्तगाली लोग गोवा में बड़ी संख्या में थे। इसलिए वहां के चाल-चलन, त्यौहार, उत्सव और दैनंदिन चाल-चलन पर उसकी छाप नजर आती है। फिडल एक यूरोपियन वाद्य है। यह वाद्य बजाने वाला एक वादक इसमें चित्रित किया गया है। उसका चेहरा, त्वचा पर लाल रंग की आभा और उसका पहनावा भारतीय संस्कृति का नहीं है- यह देखते ही पता चलता है। अंधेरे एकांत में बैठा हुआ वादक

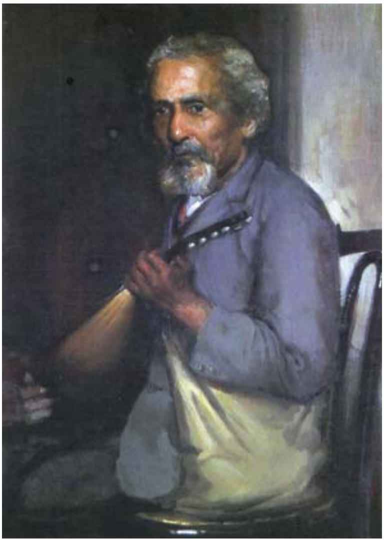

फिडलर, माध्यम- कैनवास पर तैलरंग, चित्रकार- त्रिंदाद

तन्मयता से वाद्य पकड़े है। त्रिंदाद ने छाया-प्रकाश से एक अलग ही वातावरण की निर्मिति की है। उनके रंग-लेपन में रंगों के स्ट्रोक्स राजा रवि वर्मा के चित्रों में नहीं दिखेंगे। यह मुक्त रंग-लेपन ब्रिटिश अकादमी से प्रभावित था। ब्रिटिश अकादमिक शैली के यथार्थवाद का मुंबई के चित्रकारों पर कैसा असर था, इसका यह अच्छा उदाहरण है।

अवनीन्द्रनाथ टैगोर

यह उस वक्त का चित्र है जब भारत की स्वतंत्रता के लिए स्वदेशी का अभियान जोर पकड़ रहा था। अपने देश में बनने वाली वस्तुओं का ही विचार करना है– यह विचार 'स्वदेशी' आंदोलन के माध्यम से सामने आया। राष्ट्राभिमान जगाने का प्रयास शुरू हुआ। 'स्वेदशी' आंदोलन ने भारत में इतिहास रचा। ऐसा ही एक पूरक आंदोलन बंगाल में शुरू हुआ, जिससे 'बंगाल स्कूल' या 'बंगाल शैली' कहा गया। बंगाल शब्द होने के बावजूद इसका केवल बंगाल प्रांत से संबंध नहीं था। इसका संबंध था केवल भारतीयता से। अवनीन्द्रनाथ टैगोर इस आंदोलन के उद्‌गाता थे। यह सर्वपरिचित रवीन्द्रनाथ टैगोर के भतीजे थे।

भारतमाता
माध्यम- कागज पर जल, चित्रकार-अवनीन्द्रनाथ टैगोर

अवनीन्द्रनाथ की टैगोर घराने की सुरक्षित और सुशिक्षित पृष्ठभूमि थी। वे उच्चविद्या विभूषित थे। स्वामी विवेकानंद, आनंद कुमारस्वामी, बहन निवेदिता, रवीन्द्रनाथ टैगोर– इतना ही नहीं, महात्मा गांधी ने भी यूरोपियन कला का विरोध किया था। अवनीन्द्रनाथ का इन विभूतियों के साथ सीधा संबंध था और उन्होंने 'बंगाल स्कूल' के आंदोलन की शुरुआत की। वह साल था 1895 का। अवनीन्द्रनाथ खुद एक चित्रकला शिक्षक थे। 'कलकत्ता स्कूल ऑफ आर्ट' और शांति

निकेतन के 'कलाभवन' में उन्होंने विद्यादान का कार्य किया। नंदलाल बोस, असित कुमार हलधर, के. व्यंकटप्पा, क्षितेंद्रनाथ मजूमदार जैसे कलाकारों की एक पीढ़ी का उन्होंने निर्माण किया। नंदलाल बोस ने आगे चलकर भारतीय कला में बड़ा योगदान दिया। हरिपुरा कांग्रेस के अधिवेशन में म्युरल यानि दीवार चित्र बनाने के लिए उन्हें आमंत्रित किया गया था।

अवनीन्द्रनाथ का शिक्षक के रूप में योगदान महत्त्वपूर्ण है ही, लेकिन वे एक उत्तम चित्रकार भी थे। 'भारतमाता' उनकी शैली का उत्तम उदाहरण है। अवनीन्द्रनाथ के चित्रविषय अरबीयन नाईट्स, उमर खय्याम, साहित्य और भारतीय पुराण-कथाओं पर आधारित हैं। इन विषयों पर उनके अनेक चित्र प्रसिद्ध हैं। लेकिन भारतमाता का यह चित्र उससे बहुत ही अलग है, फिर भी यह महत्वपूर्ण कलाकृति है। भारत जैसे बहुभाषिक सांस्कृतिक देश में भारतीयता की एक ही प्रतिमा दिखाना आसान नहीं था। उत्तर से दक्षिण तक और पूरब से पश्चिम तक विविध वेशभूषा है। एक ऐसी वेशभूषा, शरीर का ढांचा, एक ऐसा रूप तैयार करना जो भारत के किसी एक प्रदेश का नहीं, बल्कि पूरे भारत का हो- एक अत्यंत मुश्किल काम था। अवनीन्द्रनाथ ने इस मुश्किल काम को किया। इस चित्र में भारतमाता की आकृति अस्पष्ट, धुंधली पार्श्वभूमि से धीरे-धीरे ऊपर आ रही है, ऐसा आभास होता है। उसने केसरिया वस्त्र-परिधान धारण किए हैं। हाथ में माला व ग्रंथ जैसे आयुध हैं। ये आयुध हिंसक नहीं हैं, बल्कि अहिंसा का अवलंब करने वाले हैं। उसके वस्त्र किसी विशिष्ट प्रदेश के नहीं हैं। वे पूरे भारत का प्रतिनिधित्व करते हैं। एक स्त्री के रूप में यह भारतीयता का सुलभ दृश्यरूप है।

रवीन्द्रनाथ टैगोर

रवीन्द्रनाथ टैगोर का नाम अधिकतर लोगों को साहित्यकार के रूप में मालूम है। शांति निकेतन और रवीन्द्रनाथ टैगोर का एक-दूसरे से अटूट रिश्ता है। इतिहास की किताबों में रवीन्द्रनाथ चित्रकार थे, ऐसा पढ़ने

को मिलता है; लेकिन उनके चित्र अधिकतर कहीं देखने को नहीं मिलते हैं। इसका प्रमुख कारण है कि रवीन्द्रनाथ ने 65 साल की उम्र में गंभीरता से चित्र बनाना शुरू किया। उनके जो कुछ गिने-चुने चित्र हैं वे शांति निकेतन के कलादालान में देखने को मिलते हैं। शांति निकेतन के मनोहारी वातावरण में चप्पल निकालकर हम वहां के कलादालान में प्रवेश करते हैं और रवीन्द्र संगीत की ताल पर थिरकती हुई रवीन्द्रनाथ की सहज सुंदर कला-कृतियां हमारे सम्मुख होती हैं।

रवीन्द्रनाथ टैगोर साहित्यिक और तत्वज्ञ थे। दिनभर वे खूब लिखते थे। लिखते-लिखते कई शब्द मिटाए जाते तो कभी कोई विचार-पूर्ण रूप धारण करने तक वे अपनी ही धुन में खो जाते थे। उसी कागज पर गीर्गीटा (यानि पेन से ऊल-जलूल आकृतियां) जाता था। यही शब्द मिटाते हुए और गीर्गीटा हुआ जोड़कर चित्र बन जाता है। यह बात एक बार उनके ध्यान में आई। फिर क्या, और बहुत सारे चित्र बनने लगे। रोज नए-नए चित्र। चित्र बनाना और रंग भरना अलग

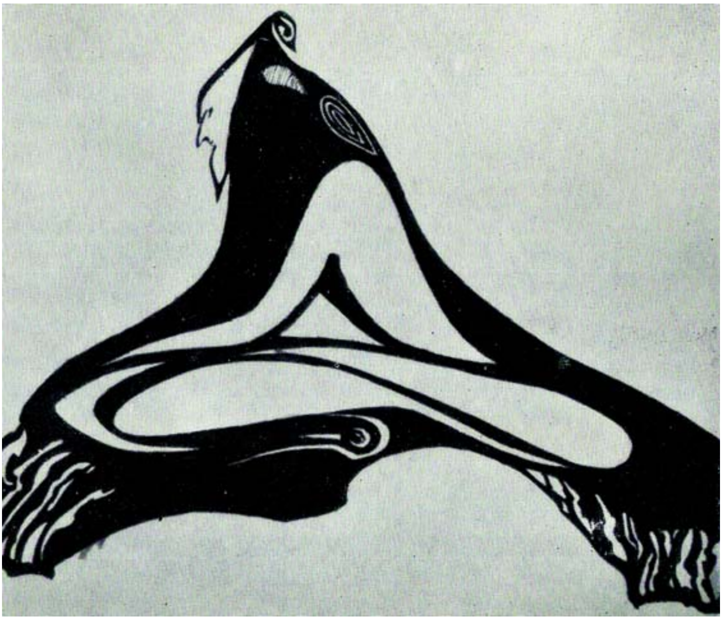

शीर्षकहीन, माध्यम-कागज पर स्याही, चित्रकार- रवीन्द्रनाथ टैगोर

नहीं था। लिखाई के कोरे कागज, स्याही, लेखनी– यही उनके चित्र के माध्यम थे। उसी से लिखना, उसी से चित्र बनाना और रंग भरना भी उसी से। इन चित्रों के विषय अधिकतर मन के काल्पनिक आकार, आसपास की औरतें, बच्चों के दुखी चेहरे होते थे। रवीन्द्रनाथ का संवेदनशील मन दुखी मन की ओर खिंच जाता और उनके चित्रों में वह व्यक्त होता था। वे कहते थे, "मैं निर्णय लेकर चित्र नहीं बनाता, चित्र बनाते–बनाते प्रतिमाएं आकार लेती हैं।" यह पढ़कर लगता है कि अब हम भी बेझिझक गीर्गीटा सकते हैं। उसे कोई चित्र कहे या न कहे।

जामिनी रॉय

जामिनी रॉय हैं बंगाल के चित्रकार। 'बंगाल स्कूल' से इनका प्रत्यक्ष संबंध नहीं था, पर यूरोपीय चित्रकला से उबकर उसे छोड़कर उन्होंने नया रास्ता अपनाया। खुद की एक स्वतंत्र शैली बनाई। यथार्थवादी चित्रण पद्धति के कारण लोग यूरोपियन शैली की ओर आकर्षित हो रहे थे, वहीं जामिनी रॉय उससे क्यों उकता गए, यह समझना जरूरी है। उनका बचपन गुजरा बंगाल के एक छोटे से गांव में। गरीब किसान के घर में उनका जन्म हुआ। घर में पैसे की अमीरी नहीं थी, पर आसपास निच्छल, निष्पाप लोग थे। प्रकृति की अमीरी थी, त्यौहार–उत्सव थे, पारंपरिक कथा और प्रथा थी। इन्हीं की संगत में वे बड़े हुए। संथाल

संथाल नृत्य, माध्यम– कागज पर प्राकृतिक रंग, चित्रकार– जामिनी रॉय

लोक जीवन, कालिघट चित्र-परंपरा का उनपर काफी प्रभाव था। ऐसे हालात में कला महाविद्यालयी शिक्षा का पराया लगना स्वाभाविक था। वे गांव वापस लौट आए। सहज-आसान आकार बनाकर उसमें रंग भरना शुरू किया। ये रंग भी नैसर्गिक थे। गोल चेहरा, मत्स्याकृति आंखें, धनुषाकृति भौंहें, शरीर पर कम से कम आभूषण, ठोस और लयदार बाहरी रेखाएं, सपाट रंग-लेपन- भारतीय कला की विशिष्टता को उन्होंने अपने अभ्यास से नया रूप दिया। संथाल देहाती महिलाएं, ग्रामीण खिलौने, ग्रामीण जनजीवन, पुराणकथा- ये उनके चित्रों के विषय थे। जामिनी रॉय को रवीन्द्रभारती विद्यापीठ ने डॉक्टरेट देकर सम्मानित किया। भारत सरकार ने भी उन्हें पद्मभूषण पुरस्कार देकर उनके योगदान को प्रणाम किया है।

अमृता शेरगिल

वारली, मधुबनी जैसी कई चित्र परंपराएं हमने देखीं। यहां की महिलाओं ने इन परंपराओं को जतन करके आगे बढ़ाया, पर उन्हें भारतीय स्त्री चित्रकार की पहचान नहीं मिली। किसी विशिष्ट परिस्थिति या प्रसंग के बारे में उन्हें क्या लगता है, इन चित्रकर्ताओं ने अपने चित्र में कहने का प्रयास नहीं किया। कहते भी कैसे? एक तो ये महिलाएं पढ़ी-लिखी नहीं थीं और दूसरे यह कि भारत में पुरुष-सत्तात्मक समाज है। यहां स्त्री को खुद की राय रखने के लिए बहुत ही धैर्य दिखाना पड़ता था। इस पृष्ठभूमि में पहला महिला नाम सुनाई दिया 1934 के बाद। यह नाम था अमृता शेरगिल।

यहां आप जो चित्र देख रहे हैं उसमें सभी औरतें हैं। इसमें भी वे आकर्षक और सुंदर नहीं हैं। गांव की सीधी-सादी औरतें हैं। वे न तो राधा हैं, न नायिका; न माता हैं, न देवी। भारतीय स्त्री का उस वक्त का प्रतिबिंब इसमें है। ऐसा क्यों था?

अमृता शेरगिल का जन्म यूरोप में हुआ। उनके पिता सिख और माता हंगेरियन थीं। उनकी पढ़ाई यूरोप में हुई और उन्होंने कला शिक्षा का 'मक्का' समझे जाने वाले पेरिस के आर्ट स्कूल से कला की शिक्षा

शृंगार करती औरतें
माध्यम-कैनवास पर तैलरंग, चित्रकार- अमृता शेरगिल

प्राप्त की। स्वाभाविक तौर पर उनके कार्य में यूरोपीय संस्कृति के स्फूर्त और स्वतंत्र विचार दिखते थे। 1934 में वे यूरोप से भारत लौटीं और भारतीय संस्कृति की खोज में पूरे भारत में घूमीं। भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के विचारों को समझकर उन्होंने उससे एक कदम आगे जाने का प्रयास किया।

अमृता शेरगिल ने रवि वर्मा की तरह कैनवास और तैलरंगों का इस्तेमाल किया। इसकी वजह यह थी कि वे अपनी भावनाएं इस माध्यम में अधिक अच्छी तरह से व्यक्त कर सकती थीं। लेकिन उनके चित्रविषय ग्रामीण जनजीवन से संबंधित रहे। ऊपर के चित्र का नाम है 'शृंगार'। चित्र देखने पर समझ में आता है कि स्त्री को उन्होंने केवल सुडौल, सुंदर, आकर्षक नहीं दिखाया है। उन्होंने स्त्री के अंतर्मन तक पहुंचने की कोशिश की है। मानो ये महिलाएं किसी सहेली से बात कर रही हों, ऐसी संवेदनशीलता का भाव उनके चित्र में दिखाई देता है। यह चित्र देखते हुए हमें भी उसी संवदेनशीलता से शृंगार करने वाली स्त्री में झांकना पड़ेगा ठीक से, तभी हम उसको समझ सकेंगे।

एम.एफ. हुसैन

आपने गजगामिनी, मीनाक्षी फिल्में देखी हैं? चित्रकार एम.एफ. हुसैन

का नाम इन फिल्मों की वजह से घर-घर में पहुंचा। चित्रकार हुसैन का बचपन बड़ी गरीबी में गुजरा। पंढरपुर गांव से मुंबई आया हुआ यह लड़का चलचित्रों के बड़े-बड़े इश्तेहार रंगता था। आगे *प्रोगेसिव आर्टिस्ट ग्रुप* से उसका संबंध हुआ और इसी से उसका पूरा जीवन बदल गया।

प्रोगेसिव आर्टिस्ट ग्रुप के बारे में बताना यहां बहुत जरूरी है। न्यूटन सुजा, एस.ए. रजा, एच.ए. गाडे, सदानंद बाकरे और एम.एफ. हुसैन- इन सबने मिलकर शुरू किया इस ग्रुप को। यह स्वतंत्र भारत के कलाकारों का पहला संगठन था। इसमें से कई कलाकार फिर विदेशों में स्थापित हुए। गायतोंडे, सामंत, रायबा, हजरनीस ऐसे कुछ कलाकार इस संगठन में सहभागी हुए। इस ग्रुप के रजा, हुसैन, और गायतोंडे का योगदान महत्त्वपूर्ण रहा है।

विलक्षण बुद्धिमत्ता व कल्पना-शक्ति और बेजोड़ मेहनत के बल पर चित्रकार हुसैन का व्यक्तित्व बनता गया। बचपन से ही होर्डिंग के बड़े आकारों को रंगने की आदत की वजह से बड़ा चित्र बनाने का दबाव उनके मन में कभी आया ही नहीं। शुरू के दिनों में उन्होंने खुद की मिट्टी से, बचपन की यादों से, आजू-बाजू के लोगों से प्रेरित होकर चित्रों का निर्माण किया। आगे चलकर

घोड़ा, माध्यम कैनवास पर तैलरंग, चित्रकार- एम.एफ. हुसैन

वे राजकीय-सामाजिक घटनाओं पर आधारित विषय संबंधित चित्रों में व्यक्त करने लगे। मदर टेरेसा, जमीन, सरस्वती, घोड़े जैसी उनकी विविध चित्र-शृंखलाएं प्रसिद्ध हैं। इसमें घोड़े की चित्र-शृंखलाएं अपनी रेखाओं और रंग-योजना के कारण काफी मशहूर हुईं। अत्यंत स्फूर्त और जोशपूर्ण रेखाएं चित्र की विशिष्टताएं हैं। घोड़े का यह चित्र इसी शृंखला से लिया गया है। घोड़े की रफ्तार, उसकी ताकत, दौड़ते वक्त उसके भाव, मुड़ा हुआ पूरा शरीर- यह सब जोरदार रंग-लेपन से उन्होंने खूबी से दिखाया है। चित्र देखते वक्त मन में सवाल आता है कि घोड़े की जो रफ्तार है कहीं उसी रफ्तार से तो यह चित्र बनाया गया नहीं होगा?

रजा

भारतीय तत्वज्ञान और अभ्यास से जिनके विचार तैयार हुए और इन विचारों की अभिव्यक्ति जिनके चित्रों से हुई उन्हीं में से एक हैं रजा। इस किताब की शुरुआत में बिंदु के बारे में हमने पढ़ा है। बिंदु से रेखा और आकार तैयार होते हैं। केवल चित्रकला ही नहीं, सारे विश्व की उत्पत्ति बिंदु से हुई है- इस संकल्पना का इन्होंने अभ्यास किया।

माध्यम- कैनवास पर तैलरंग, चित्रकार- रजा

प्रकाश देने वाले सूर्य का गोल, रात के चंद्रमा का गोल जैसी प्रतिमाएं इनके शुरू के चित्रों में दिखाई देती हैं। धीरे-धीरे सूर्य, चंद्र जैसे विशिष्ट संदर्भ जाकर केवल बिंदु या गोल अस्तित्व के रूपों में रजा के चित्रों में आने लगे। साथ ही त्रिकोण, चौकोर जैसे मूलभूत आकार और कभी-कभी इस सारे से जुड़ा हुआ भारतीय तत्वज्ञान का कोई श्लोक। जिसे आप देख रहे हैं यह चित्र भी ऐसे ही चित्रों में से एक है। इन्होंने जैसे त्रिकोण, चौकोर मूलभूत आकारों की योजना की, वैसे ही लाल, पीला, नीला जैसे शुद्ध रंगों का प्रयोग किया। इनका बचपन मुंबई में बीता और महाविद्यालय की पढ़ाई भी वहीं हुई। प्रोग्रेसिव आर्टिस्ट ग्रुप के शुरू के कलाकार सभासदों में से रजा भी एक कलाकार थे। बाद में वे पेरिस में स्थापित हो गए। आज भी यूरोप में रहकर वे भारतीय तत्वज्ञान पर आधारित कला-निर्मिति कर रहे हैं।

वी.एस. गायतोंडे

इस किताब की शुरुआत में हमने अमूर्त चित्र कैसे देखा जाए, उसे कैसे समझा जाए- इसके बारे में थोड़ा-बहुत पढ़ा है। भारतीय कला-इतिहास में अमूर्त चित्रशैली के लिए चित्रकार गायतोंडे बड़ा ही जाना-माना नाम है। जैसा कि हमने पहले देखा है, अमूर्त चित्रों में कोई पहचानने लायक विशिष्ट प्रतिमा नहीं होती। यह चित्र तो केवल आकारों से बनता है। गायतोंडे के शुरू के चित्रों को छोड़कर लगभग सभी अमूर्त चित्र हैं। इनका

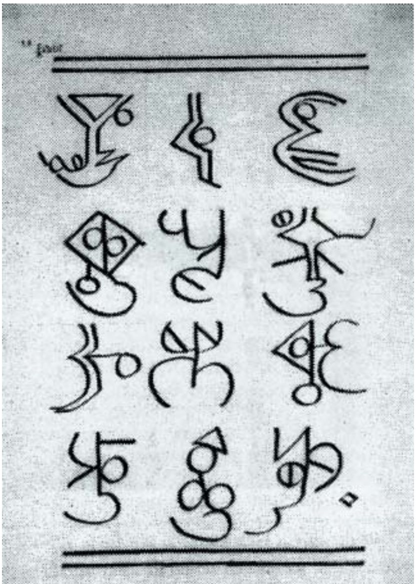

चित्रकार- वी.एस. गायतोंडे

कला शिक्षण मुंबई के सर जे.जे. कला महाविद्यालय में हुआ, लेकिन बाद में वे दिल्ली में रहने लगे। इसी वजह से उनकी कर्मभूमि दिल्ली रही। वे काफी चिंतन और मनन करते थे। उनका भारतीय अध्यात्म और बौद्ध-जैन तत्वविज्ञान का अभ्यास था। इसी अभ्यास से उनकी चित्रनिर्मिति हुई है। चित्र बनाने की प्रक्रिया उनके लिए मानो समाधि क्षण की अनुभूति होती थी। चित्र और उनके चित्र-विचार एकरूप हो जाते थे। इनके चित्रों में गहरे रंग की पृष्ठभूमि से धीरे-धीरे स्पष्ट होने वाले आकार दिखाई देते हैं। छापे गए चित्र रेखांकन को आप बहुत देर तक देखते रहेंगे तो आपको आकारों का खेल महसूस होगा। थोड़ी ही देर में आप इस चित्र के बारे में स्वतंत्रता से सोचने लगेंगे।

मनजीत बावा

भारतीय मिथकों (पुराणकथा के संदर्भ) के प्रति अलग ही दृष्टिकोण है मनजीत बावा का। इसको इन्होंने अपने चित्रों के माध्यम से व्यक्त किया है। इनके चित्रों में देवी-देवताओं की विविध प्रतिमाएं अभिनव रूप में दिखाई देती हैं। उन्होंने शुद्ध लाल रंग की पृष्ठभूमि पर एक पांव वाली गाय और छह हाथों वाले भगवान की आकृतियों की रचना की है। ऐसी विचित्रता-पूर्ण रचनाएं उनकी चित्र की निर्मिति की विशेषता रही है। शुद्ध रंगों की योजना जैसे मनजीत बावा

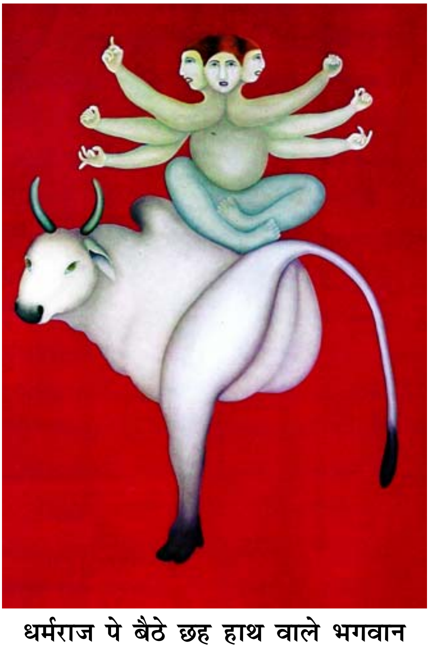

धर्मराज पे बैठे छह हाथ वाले भगवान
माध्यम- कैनवास पर जलरंग
चित्रकार-मनजीत बावा

के चित्रों की खासियत है, वैसे ही भारतीय पौराणिक कथाओं के मिथक का अर्थ निकालकर उसे अपने चित्र में प्रस्तुत करना भी। कृष्ण, दुर्गा, शिव, गणेश, हनुमान जैसे विविध विषयों पर उनके द्वारा बनाए गए चित्र प्रसिद्ध हैं।

प्रभाकर बरवे

'मेंढ़े' वाला चित्र प्रभाकर बरवे की प्रसिद्ध किताब 'कोरा कैनवास' से लिया गया है। बरवे के चित्रों में पत्थर, मिरची, पेड़, पशु, बीज, जैसे छोटी–बड़ी वस्तुओं के आकार दिखते हैं। 'निसर्ग के मूलाक्षर' नामक चित्र में अभी–अभी जमीन से ऊपर आया हुआ नन्हा पौधा, पेड़, पत्ता, पंछी, मछली, फल, फूल जैसे अनेक आकार हैं। आपने कभी आसमान में हाथी के आकार का बादल देखा है, या फिर पेड़ के पत्ते जैसे दिखने वाला मछली का आकार, या फिर किसी उबड़–खाबड़ बादल में चेहरा? ऐसे कई आभासी आकार इनके चित्रों में दिखते हैं। प्रकृति के प्रति गहरी श्रद्धा और खुद के चित्र से सच्चे रहे बरवे ने 'कोरा कैनवास' नामक किताब में लिखा है, "नाभि के मूल से पेंटिंग का जन्म होना चाहिए। वहां से निकले आकार भूख जितने ही सच्चे होते हैं।"

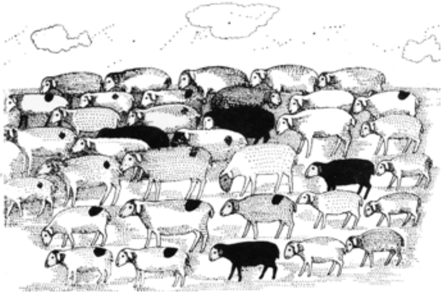

मेंढे (रेवड़), माध्यम- कागज पर रेखांकन
चित्रकार- प्रभाकर बरवे

भुपेन खक्कर

भुपेन खक्कर चित्रकार के तौर पर मशहूर नहीं थे। इनका जिक्र कला विचारक और समीक्षक के तौर पर होता है। भुपेन खक्कर गुजरात प्रांत के महत्त्वपूर्ण चित्रकार हैं। इनकी बहुत–सी चित्र प्रतिमाएं आम लोगों की आज की परिस्थिति के बारे में कहती थीं। इनके इस चित्र का नाम है 'गर्भावस्था में भक्त' (The Pregnant Devotee) इस चित्र की

संकल्पना के बारे में उन्होंने एक जगह लिखा है, "देवनंदन नामक उनके एक मित्र एक बार उनके घर आए। वे ठण्ड की सुबह में मोटी-सी चादर सर और पूरे शरीर पर लपेटकर हाथ में माला लिए जाप कर रहे थे। उन्हें देखकर ऐसा आभास होता था मानो सामने कोई स्त्री बैठी है।" ऐसी ही बैठी अवस्था में भुपेन खक्कर ने उनका चित्र बनाया। शरीर पर लपेटी यह चद्दर साड़ी जैसी लगती है और देवनंदन की तोंद गर्भावस्था की सूचना देती है। प्रातः पहर में हाथ में माला लिए कृष्ण नाम का जाप करने वाले देवनंदन पेट में भक्ति-रस से गर्भावस्था में हैं, ऐसा लगता था।

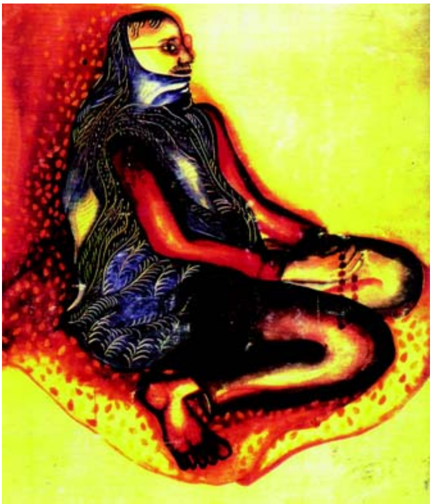

गर्भावस्था में भक्त, माध्यम- कागज पर जलरंग, चित्रकार- भूपेन खक्कर

नसरीन मोहम्मदी

नसरीन मोहम्मदी के अमूर्त चित्रों पर जैन, बौद्ध और ताओ विचार प्रणाली का प्रभाव था। इन्होंने कुछ समय एम.एस. यूनिवर्सिटी, फॅकल्टी ऑफ फाईन आर्ट्स, बड़ौदा के कला महाविद्यालय में शिक्षक के रूप में काम किया था। चित्र बनी रेखाओं को कैसे देखें, ऐसा प्रश्न आपके मन में उठना स्वाभाविक है। लेकिन अमूर्त चित्र इतनी आसानी से स्पष्ट नहीं होता। हां, अगर आपने नसरीन के छाया-चित्र देखे हों तो आपको उनकी चित्र बनाने की प्रक्रिया शायद समझ आए। उनके एक छायाचित्र में जमीन पर बारह बजे की धूप गिरी हुई दिखाई देती है। जमीन पर कोई एक सीढ़ी, जमीन पर रखी वस्तुओं का ऊपरी पृष्ठभाग और इनका खड़ा हिस्सा- इतना ही हमें दिखता है। मतलब

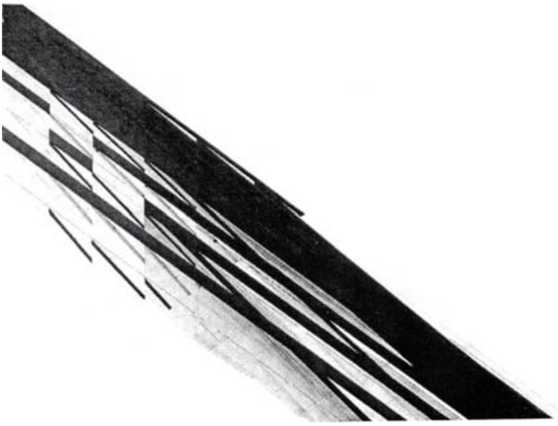

शीर्षकहीन, माध्यम- कागज पर स्याही चित्रकार- नसरीन मोहम्मदी

पृष्ठभाग पर पड़ी कड़क धूप और खड़े हिस्से की 'गहरी छांव' की केवल रेखाएं इस छायाचित्र में हैं। वह छाया-चित्र यहां छाप नहीं सके हैं, पर इस चित्र के रेखाओं की रचना भी ऐसे ही दृश्य से जुड़ी हुई है अर्थात् ऐसा चित्र केवल देखकर समझ लेना थोड़ा मुश्किल होगा। पर आप भी ऐसे ही नजरिये से अपने इर्द-गिर्द देखना शुरू करेंगे तो छाया-प्रकाश के इस लुभावने खेल में रेखाओं के कई दृश्य आपको भी जरूर दिखाई देंगे।

सुधीर पटवर्धन

'आम इंसानों के प्रति आत्मीयता रखने वाले और इंसानों के चित्रकार'- ऐसी ही सुधीर पटवर्धन की पहचान है। इन्होंने महाविद्यालय में चित्रकारी की बाकायदा पढ़ाई नहीं की। पेशे से ये डॉक्टर हैं- रेडियोलोजिस्ट। इनके चित्रों में इंसान के प्रति जो आत्मीयता दिखती है, इसका कारण इनकी वैद्य की शिक्षा और पेशा हो सकता है- ऐसा इनका मानना है। इसके अलावा मार्क्सवादी आंदोलन में कुछ काल तक सहभागिता और मार्क्सवादी विचार-प्रणाली इनकी चित्रनिर्मिति की पूरक थी। यहां छपा हुआ चित्र केवल एक आरेखन है। 'मोर्चा की ओर' किसी मोर्चा से जुड़े हुए आदमी का स्केच है। गौर से देखें तो पता चलेगा कि उस आदमी के एक हाथ में लाठी है और इस लाठी

पर उसके हाथों की मजूबत पकड़ है। एक पैर ऊपर उठाए वह रास्ता रोके खड़ा है। चेहरे पर उग्र भाव के साथ थोड़ी मायूसी छाई है। आम लोगों की मोर्चा और हड़ताल की वजह से होने वाली हालत का एहसास होता है। इनके अधिकांश चित्रों में आज के शहरी इंसान के दैनंदिन जीवन के विविध संदर्भ हैं।

XXXX

चित्रकला को समझने के लिए हम एक साथ इस सफर पर चल पड़े थे। भिमबेटका गुफाओं के आदिमानव के चित्रों से हमने शुरुआत की। अब हम इसके अंतिम पड़ाव तक पहुंच गए हैं।

मोर्चा की ओर,
माध्यम- कागज पर रेखांकन
चित्रकार- सुधीर पटवर्धन

भारतीय चित्रकला की यह लंबी कहानी, कई सदियों का यह सफर, पंचतंत्र की कथाओं जैसी सरस नहीं है। पर बुद्धि और मन को विस्मित रखने वाली जरूर है। इसकी कई महत्त्वपूर्ण घटनाएं हमने देखीं, पर और कई प्रकार के चित्र, उसकी कहानियां, शैली के बारे में हम जगह की मर्यादा के कारण यहां बता नहीं सकते। हम गुफा चित्रों से सीधा अजंता चित्रों पर आ गए, और वहां से मुगल लघुशैली तक पहुंचे। अजंता चित्र शैली के बाद और मुगल लघुशैली से पहले मंदिर भित्ति चित्रों की बहुत बड़ी परंपरा भारत में रही है। आज भी दक्षिण के मंदिरों में और सिक्किम के पॅगोडा मंदिरों में मंदिर-चित्र दिखाई देते हैं। भारतीय कला इतिहास में लघुचित्र शैली भी महत्त्वपूर्ण है। इसके दो महत्त्वपूर्ण प्रकार भी हमने देखे। यह

शैली आज भी अस्तित्व में है। आस्था हो तो नजदीकी कला-संग्रहालय में या आस-पास के गांवों में हम इन्हें खोज सकते हैं। क्या पता, ऐसी खोज में आज तक न मिला हुआ चित्र भी मिल जाए।

राजा रवि वर्मा के बारे में हमने पढ़ा। पर उनका केवल चित्र देखकर मन नहीं भरता। उनके प्रति और जानने के लिए किताबों और कला संग्रहालय का सहारा लेना पड़ेगा। वहीं बात 'बंगाल शैली' के बारे में भी है। अवनीन्द्रनाथ के कई और सुंदर चित्रों की बातें रह गई हैं। नंदलाल बोस, असित कुमार हलधर, क्षितेंद्रनाथ मजूमदार– इनके चित्र यहां छाप नहीं सके। उनकी परंपरा को आगे चलाने वाले गणेश पाईन, के.जी. सुब्रह्मण्यम जैसे अनेक चित्रकार और उनके चित्रों के बारे में जानना आपको जरूर अच्छा लगता है। यह सब जानते हुए भी किताब की मर्यादा को ध्यान में रखना पड़ा। लेकिन यहां कुछ और कलाकारों के नाम बताना जरूरी है। पेस्तनजी बोमनजी, एम.एफ. पिठावाला, एम.वी. धुरंधर, एल.एस. तासकर, एन.एस. बेंद्रे, ए.के. हेब्बर– ये सब पहले की पीढ़ी के व्यक्ति-चित्रकार, निसर्गचित्रकार और रचनाकार हैं। इनकी चित्रकृतियां भी बड़ी अच्छी हैं। गायतोंडे, रजा, बरवे, नसरीन मोहम्मदी, भुपेन खक्कर, मनजीत बावा से लेकर सुधीर पटवर्धन तक के चित्र हमने देखे। समकालीन चित्रशैली के अलग-अलग चित्र बनाने वाले चित्रकार और उनकी चित्रकृतियां समझने के लिए इन चित्रकारों को यहां अंतर्भूत किया गया है। इनके अलावा समीर मोंडल, रोबीन मोंडल, अंजली इला मेनन, रीनी धुमाल, अतुल दोडिया, टी. वी. संतोष, रियाज कोमू, नलिनी मलानी, अकबर पदमसी जैसे अनेक कलाकारों के चित्र आप देख सकते हैं। ये चित्र देखने के लिए आप किताबों का, अखबार का और सबसे महत्त्वपूर्ण कलादालान की मदद ले सकते हैं। चित्र कैसे देखें, उसका रसग्रहण कैसे करें, कैसे समझें, इसके बारे में हमने शुरू में पढ़ा है। फिर भी शुरू-शुरू में चित्र-प्रदर्शनी देखते वक्त शायद मुश्किल लगेगी। लेकिन चित्र से बातें तो करो, वह भी आपसे दोस्ती का हाथ बढ़ाएगा।

भारतीय तत्वज्ञान कहता है, "कोई भी कला अलौकिक आनंद देती है।" मतलब कोई भी चीज अगर आप खरीदते हैं या मिलती है तो वह वस्तु-विषय का आनंद है- लौकिक आनंद। पर कलानिर्मिति देखने से, सुनने से या निर्माण करने से जो आनंद मिलता है वह अलौकिक आनंद है- आत्मा का आनंद।

यहां से आगे का सफर अब आपको तय करना है। बहुत चित्र देखने हैं, उन्हें समझने का आनंद भी लेना है। एक वाक्य याद आया, "हर कलाकार कोई खास इंसान नहीं होता, पर हर इंसान में एक खास कलाकार जरूर होता है।" आपके अंदर का ऐसा ही कोई जाना-अनजाना कलाकार प्रेरित होकर चित्र बना सकता है। आगे के चित्र-सफर के लिए आपको हार्दिक शुभकामनाएं।